कोसी क्षेत्र के मंदिरों का इतिहास एक सर्वेक्षण

डॉ0 दीनबन्धु प्रसाद*

महाकवि कालीदास के अनुसार कोशी के तट पर साक्षात् शंकर बसते है। यह क्षेत्र शिव का समाधि स्थल रहा है तथा देवताओं का शिव से भेंट करने का निर्दिष्ट स्थल भी। वाल्मीकि के रामायण के अनुसार कौशिकी विश्वामित्र की ज्येष्ठ बहन थी। इसी के तट पर विश्वामित्र ने घोर तप किया था और गायत्री मंत्र को सिद्ध किया था। यही करण है कि सहरसा जिले के सम्पूर्ण क्षेत्र मे शिव और शक्ति की उपासना का अद्‌भूत समन्यवय है।

प्राचीन भारत मे ईसा पूर्व चौथी सदी से मंदिर–निर्माण का क्रम आरम्भ होकर मुसलमान काल से पहले अवरूद्ध हो गया। परन्तु मंदिरों की वास्तुकला पर कोई बाहरी प्रभाव न पड़ सका। सामाजिक विषयों के अनुशीलन से यह प्रकट होता है कि भारतीय जीवन में इस्लाम आदि का कुछ प्रभाव अवश्य हुआ। कला के क्षेत्र में साहित्य तथा चित्रशैली पर बाहरी प्रभाव स्पष्ट है।

कोशी क्षेत्र का सामाजिक आर्थिक, धार्मिक आदि परम्पराओं में एक विशिष्ट पहचान रही है। जहाँ तक मिथिला की धार्मिक परम्परा का प्रश्न है, यहाँ आरम्भ से ही धार्मिक सहिष्णुता रही है। यहाँ सभी धर्मों के अनुयायी समान रूप से आदर पाते रहे हैं। यहाँ वैदिक देवताओं की प्रधानता रही है। शिव, शक्ति तथा विष्णु तीनों ही देवता कोसी वासियों के मन एवं कर्म में रचे बसे हैं। एक मैथिल के कपाल पर भस्म, चन्दन एवं सिन्दूर का ठोप तथा गले में रूद्राक्ष की माला सहज ही देखी जा सकती थी। अगर किसी मैथिल के गले में तुलसी की माला थी तो उसकी बाँह पर एक रूद्राक्ष अवश्य ही देखा जा सकता था। कहने का अर्थ यह है कि चन्दन एवं तुलसी माला विष्णु के प्रति, सिन्दूर ठोप शक्ति के प्रति एवं रूद्राक्ष शिव के प्रति भक्ति प्रदर्शित करता है।

विष्णु की पूजा मिथिलावासी उनकी मूर्ति के समक्ष करते है पुनः शालीग्राम पत्थर को भी विष्णु का रूप मानकर ही पूजा–अर्चना करते है। उनके प्रति भक्ति प्रदर्शन लोग हरिवंशपुराणा, श्रीमद् भागवत, सुखसागर, रामायण आदि ग्रन्थों का पठन एवं श्रवण करते हैं। ये ग्रन्थ मैथिल भक्तों के लिए विष्णु भक्ति का मूल श्रोत है।

***स्नातकोत्तर इतिहास विभाग बी0एन0एम0यू0, मधेपुरा।**

शक्ति की उपासना मिथिला के प्रत्येक घर से कुल देवता के रूप में की जाती है। गाँव के बाहर या सार्वजनिक स्थान पर भी देवी–देवता के स्थान देखे जा सकते हैं। दशहरा पर्व के अवसर पर नवरात्र पर मिथिलावासी को शक्ति की उपासना में लीन देखा जा सकता है। मिथिला में कोई भी शुभ कार्य करने के पहले यथा–मुण्डन, उपनयन एवं विवाह आदि के अवसरों पर शक्ति के पूजन की प्रधानता रहती है। शुभ कार्य के अवसर पर "जय–जय भैरवी अशुर भयाउनि पशुपति भामिनि माया" गीत का गायन आज भी प्रचलित और प्रसिद्ध है।

शिव पूजा लोग प्रतिदिन करते थे। विशिष्ट अवसरों पर विशिष्ट रूप से इसकी पूजा अर्चना की जाती है। महाशिवरात्री के दिन लोग उपवास रखते हैं। निकट के जलाशयों में स्नान कर शिवमंदिर जाकर इनकी मूर्ति अथवा लिंग पर जल चढ़ाकर उनके प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करते हैं। सावन एवं आश्विन मास में लोग काँवर ढ़ोकर शिवलिंग पर जल चढ़ाते हैं। महामारी जैसे भयानक रोग के प्रकोप बढ़ने पर लाखों की संख्या में मिट्टी के शिवलिंग बनाकर गाँव में सामूहिक रूप से पूजा करने की परम्परा है। यहाँ के लोगों में यह विश्वास है कि भगवान शिव ही मोक्ष प्रदान करनेवाले हैं। शिव भक्ति से संबंधित महेशवाणी, नचारी आदि मिथिला के घर–घर में प्रसिद्ध है। मिथिलावासियों के लिए शिव संबंधी मंदिर जहाँ उनकी आस्था है।

दुर्गा की मिट्टी की मूर्ति पूजन पद्धति मिथिला में प्रचलित है। दुर्गा मंदिर में दर्शन–पूजन नवरात्र में नौ दिनों का व्रत तथा महाष्टमी के दिन चंडी पाठ की प्रथा सर्वत्र प्रचलित है। अभी भी तंत्र तत्सामयिक मिथिला के धार्मिक इतिहास में विशिष्ट स्थान रखता है। तथा यह मिथिला के साथ–साथ भारतवर्ष के प्रत्येक घर तथा मंदिर के रीति–रिवाज की परम्परा का एक आधार स्तम्भ है। यहाँ पंचतत्व उपासना पद्धति भी विकसित है। बहुत से वामाचारी उत्कर ब्रह्मचारी होते हैं। जैसे–औघड़ साधु। ये भैरव के उपासक होते है।

मिथिला के विभिन्न धर्मालंबी होने के बाद भी उनमें अद्‌भूत एकता है, समरसता है, जो अन्यत्र दुर्लभ है। क्या उच्च जाति क्या नीच जाति, क्या मुसलमान सभी एक दूसरे के सहयोग करते हैं।

मिथिला की संस्कृति की आधार शिला है आध्यात्मिक दृष्टिकोण। औपनिषदिक युग से ही मिथिला अपनी दर्शनिक विचार धारा के लिए प्रसिद्ध है। कोशी क्षेत्र की ऐतिहासिक धरोहरों के अनुसंधान के क्रम में अनुमान होता है कि यह सम्पूर्ण क्षेत्र ब्राह्मण एवं बौद्ध धर्मानुयायियों का प्रमुख केन्द्र रहा होगा। यह क्षेत्र मूलतः बौद्ध धर्म से प्रभावित था क्योंकि इस क्षेत्र में स्तूप एवं डीर अधिक संख्या में प्राप्त हुए है। ख्याति प्राप्त विक्रमशिला महाविहार की स्थापना पालवंशीय

शासक धर्मपाल के द्वारा किया गया था। यह क्षेत्र तंत्र शाखा के रूप में विकसित था और अंक जनपद में प्रथम तंत्र बिहार की स्थापना विक्रमशिला में हुई थी। विक्रमशिला का तंत्रयान तथा तंत्र की विकसित शाखा महिषी (बनगाँव) में स्थापित है क्योंकि आज भी तांत्रिक पद्धति से उग्रतारा की पूजा अर्चना की जाती है। उग्रतारा देवी के संबंध में वर्णरत्नाकर में शमशान के विवरण के क्रम में उग्रतारा का चौसठ योगिनी नाम उल्लिखित है, जिन्हें खादिरवाणि तारा भी कहा जाता है। प्रतिमा लक्ष्मणनुसार इस देवी का वर्ण हरित होता है, देवी द्वि भुजी होती है जिसमें क्रमशः नील कमल एवं वायां हाथ वरद मुद्रा में, सिर पर अमोध सिद्धि की सूक्ष्म प्रतिमूर्ति अंकित होती है। यह ध्यानी बुद्ध आमोध सिद्धि से उत्पन्ना देवी होती है। मूलतः उग्रतारा की प्रतिमाएँ भयानक, गले में मुण्डमाला एवं शव के ऊपर खड़ी रहने का उल्लेख भी है। उग्रतारा की प्रतिमा लक्षण के संबंध में विनयतोष भट्टाचार्या का मत है कि देवी प्रतिमा के ललाट पर लघु मूर्ति होनी चाहिए। इस मंदिर परिसर में ब्राह्मण एवं बौद्ध धर्म की खण्डित प्रतीक के भी दर्शन होते है। बुद्ध की महापरिनिर्वाणमुद्रा में एक प्रतिमा इस मंदिर के द्वार पर दर्शकों के द्वारा पूजनीय है। वस्तुतः यह बुद्ध के जन्म की आठ प्रमुख घटनाओं का एक घटना दृश्य है। सम्पूर्ण बुद्ध मुर्ति अभी तक अप्राप्त है।

बनगाँव के उत्तरी भाग में स्थित बड़े–बड़े दो डीह परौलडीह, जिसकी ऊँचाई लगभग 6 फीट एवं देवनाडीह की ऊँचाई 9 फीट तथा इसका भूखण्ड लगभग 18 एकड़ मे फैला हुआ है। इस डीह पर शिव मंदिर भी है। इन दोनों डीहों से विशेष कर वर्षा के समय स्थानीय लोगों को सिक्के एवं मृद्भाण्ड के टुकड़े मिलते है। इसके पूर्व में भी ताम्रपत्र, शिलालेख के भग्नावशेष प्राप्त है। इस मंदिर के पास महिषी ग्राम दर्शन गुरु मण्डन मिश्र की निवास स्थली रही है जहाँ पर मण्डन मिश्र की विदुषी पत्नी भारती के संबंध में उल्लेख है कि हिन्दू धर्म को सुद्धढ़ करने के दृढ़ संकल्प के लिए शंकराचार्य को यही कामशास्त्र के एक प्रश्न पर परास्त होना पड़ा था।

सीमित अन्वेषण एवं उत्खनन के कारण कोशी की प्राचीनता, वहाँ की प्रार्दुभाव पर पर्याप्त प्रकाश नहीं पड़ पाया है। साथ ही इस क्षेत्र के प्रारम्भिक इतिहास को उद्घाटित करने वाले साहित्यिक साक्ष्य ग्रन्थों में यदा–कदा कोशी क्षेत्र का उद्धरण प्राप्त होते हैं। बिहार में यदि गंगा को विभाजन रेखा माने तो सांस्कृतिक दृष्टि से पूरा बिहार दो भागों में बँटा नजर आता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में गंगा से दक्षिण का क्षेत्र अनार्य भूमि के रूप में उल्लिखत है। गंगा से उत्तर का क्षेत्र आर्यो का प्रमुख क्षेत्र रहा और उस क्षेत्र में मानव सभ्यता की नींव आर्यों के द्वारा ही रखी। इस सन्दर्भ मं शतपथ ब्राह्मण का उद्धरण उल्लखित है।

जिसमें कहा गया है कि विदेह माधव सरस्वती क्षेत्र से अपने पुरोहित ऋषि गौतम एवं राहुगन के साथ अग्नि वैश्वानर को मुँह में रखकर पूरब की ओर अग्रसर हुए। मार्ग में अग्नि भूमि पर गिर पड़े और पूरब में सदानीरा तक सम्पूर्ण भूमि को जला डाला। विदेह माधव ने अग्नि से प्रश्न किया कि मेरा प्रभुत्व क्षेत्र कहाँ तक होगा। तब अग्नि ने बताया कि आप सदानीरा तक ही सीमित रहें। बेवर ने इस घटना को पूरब में ब्राह्मण संस्कृति के प्रसाद से चिन्हित किया है और अग्नि वैश्वानर को ब्राह्मण संस्कृति और कर्मकाण्ड का प्रतिनिधि माना है।

कोशी की विभीषिकाओं से विकृत इस ऐतिहासिक भू–भाग में विकसित संस्कृति के अनेक परिदृष्य रेखांकन योग्य है। नाग संस्कृति के विभिन्न आयामों में गीत–गाथाएँ, कथा अनुश्रुति, मूर्ति पूजा पात्र, नाच–गान, थान–गहवर, नागपंचमी, मधु श्रावणी आदि विशिष्ट है।

नागपूजन वस्तुतः प्रकृति पूजा है। जिसे आर्यो ने लम्बे संघर्ष के बाद परिष्कृत रूप में इसे अंगीकार किया। जबकि नागदेवों का पूजन सोन्मुखी है। बारहवीं सदी के बाद नागदेव–देवियों का शिल्पांकन नहीं मिलता। आखिर क्या कारण है पाल युग तक आकर इनका शिल्पांकन विराम ले लेता है। जबकि जनपदीय संस्कृतियों से इनका अभिशिल्पन पुष्पित है। नागर का संबंध आर्य एवं आर्येतर दोनों से है। अतः इसका सम्पर्क अनुशीलन आवश्यक है।

अन्त में, वस्तुतः यह क्षेत्र ऐतिहासिक स्थल है, जहाँ से समय–समय पर पुरावेष मिलते रहते है। महिषी से ही भूमि स्पर्श मुद्रा की लगभग 10 वीं शताब्दी की काले प्रस्तर की प्रतिमा भी प्राप्त है। जिसका प्रभाव मण्डल अलंकृत एवं अण्डाकार है। जगतपुर (सुपौल) से भी तारा की प्रतिमा प्राप्त है। इन प्रतिमाओं से ही ऐसा लगता है कि यह क्षेत्र बौद्ध धर्म का प्रमुख स्थल रहा होगा। विराटपुर की चण्डी स्थान में बुद्ध मूर्ति की पूण्योपासना बुद्धाय स्वामी के रूप में सर्वव्यापी हैं यह प्रमण्डल बौद्ध संस्कृति के ऐतिहासिक अवशेषों से आच्छादित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, अनुअल रिपोर्ट, 1903–04, पृष्ठ–82
2. सेकरेड बुक ऑफ दी ईस्ट, खंड–ऑक्सफोर्ड, 1884, पृ0–104 एवं उद्धरण
3. जनरल ऑफ एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल, 1897, पृ0–88 एवं उद्धरण
4. उपेन्द्र ठाकुर, हिस्ट्री ऑफ मिथिला, पृ0–03
5. बनगाँव प्लेट ऑफ विग्रह पाल 111, उपरोक्त पृ0–56
6. हवलदार त्रिपाठी, बिहार की नदियाँ, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक सर्वेक्षण, पृ0–396
7. हवलदार त्रिपाठी सहृदय, बौद्ध धर्म और बिहार, पृ0–90